International Journal of Enhanced Research in Educational Development (IJERED) ISSN: 2320-8708
Vol. 3 Issue 2, March-April-2015, pp: (100-102), Impact Factor: 1.267, Available online at: www.erpublications.com

पर्यावरण शुद्धि में अग्निहोत्र का महत्त्व

मेजर (डॉ.) बेला मलिक

संस्कृत विभाग सेठ मथुरादास बिनानी राजकीय स्नात्कोत्तर महाविद्यालय, नाथद्वारा

भारत में मनीषियों ने हजारों वर्ष पूर्व मानव-जीवन के कल्याणार्थ पर्यावरण का महत्त्व और उसकी रक्षा, प्रकृति से सानिध्य, संवेदनशीलता, रोगों के उपचार तथा स्वास्थ्य सम्बन्धी अनेक उपयोगी तत्त्व खोज निकाले थे। वेदकालीन समाज में न केवल पर्यावरण के सभी पहलुओं पर चौकन्नी दृष्टि थी, वरन् उसकी रक्षा और महत्त्व को भी स्पष्ट किया गया था। उन लोगों की भी दृष्टि पर्यावरण-प्रदूषण की ओर थी अतः इन्होंने प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप में पर्यावरण की रक्षा की और समाज का ध्यान इस ओर आकर्षित किया था। वे भूमि को ईश्वर का रूप ही मानते थे। पर्यावरण की रक्षा, पूजा का एक अविभाज्य अंग था, जैसा कि कहा भी गया है-

यस्यभूमिः प्रभाऽन्तरिक्षमुतोदरम।
दिवं यश्चके मूर्धानं तस्मै ज्येष्ठाय ब्रह्मणे नमः ।। (अथर्व/ 10/7)

अर्थात् "भूमि जिसकी पादस्थानीय और अन्तरिक्ष उदर के समान है तथा द्युलोक जिसका मस्तक है, उन सबसे बड़े ब्रह्म को नमस्कार है।"
यहां परमब्रह्म परमेश्वर को नमस्कार कर प्रकृति के अनुसार चलने का निर्देश किया गया है। वेदों के अनुसार प्रकृति एवं पुरूष का सम्बन्ध एक-दूसरे पर आधारित है। ऋग्वेद (7/103/7) में वर्षा ऋतु को उत्सव मान कर शस्यश्यामला प्रकृति के साथ अपनी हार्दिक प्रसन्नता की अभिव्यक्ति की गयी है-

ब्राह्मणासो अतिरात्रे न सोमे सरो न पूर्णमभितो वदन्तः।
संवत्सरस्य तदहः परिष्ठ यन्मण्डूका प्रावृषीणं बभूव ।।

वेदों में पर्यावरण को अनेक वर्गों में बॉटा गया है जैसे वायु, जल, ध्वनि, खाद्य और मिट्टी, वनस्पति, वन-सम्पदा, पशु-पक्षी संरक्षण आदि। सजीव जगत के लिए पर्यावरण की रक्षा में वायु की स्वच्छता का प्रथम स्थान है। बिना प्राण-वायु (ऑक्सीजन) के क्षण भर भी जीवित रहना संभव नही है। ईश्वर ने प्राणि जगत् के लिये सम्पूर्ण पृथ्वी के चारों ओर वायु का सागर फैला रखा है। हमारे शरीर में रक्त वाहिनियों में बहता हुआ रक्त बाहर की ओर दबाव डालता रहता है, यदि इसे संतुलित नहीं किया जाये तो शरीर की सभी धमनियां फट जायेंगी और जीवन नष्ट हो जाएगा। 'वायु का सागर' इससे हमारी रक्षा करता है। पेड़-पौधे ऑक्सीजन देकर क्लोरोफिल की उपस्थिति में, इसमें से कार्बन डाई आक्साइड अपने लिए रख लेते है और ऑक्सीजन हमें दे देते है। इस प्रकार पेड-पौधे वायु की शुद्धि द्वारा हमारी प्राण रक्षा करते हैं।

वायु की शुद्धि सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। वर्तमान समय में पर्यावरण संरक्षण व शुद्धि हेतु अग्निहोत्र का विशेष महत्त्व है। यज्ञ विषयक प्राचीन ग्रन्थों का स्पष्टीकरण देने वाले 'भाष्य' ग्रन्थों में अग्निहोत्र शब्द का अर्थ दो प्रकार से समझाया गया है। जिस विधि में अग्नि को उद्देश्य कर होम किया जाता है, वह कर्म अग्निहोत्र कहलाता है-यस्मिन् अग्नेय होत्रं होमो भवति तदग्निहोत्रम्। यहां अग्निहोत्र शब्द बहुव्रीहि समास की पद्धति से स्पष्ट किया जा कर वह कर्मवाहक माना जाता है। दूसरी प्रकार से अग्नि में दी जाने वाली जो आहूति, वहीं अग्निहोत्र है- अग्नये होत्रमिति तत्पुरूष व्युत्पत्यया हविर्नाभि। यहां अग्निहोत्र यह अग्नि में अर्पण की जाने वाली आहुति का सूचक माना जाता है।

अग्निहोत्र यह यज्ञ का मुख है ऐसा वेदों में कहा है और श्रौत सूत्र के अनुसार यजमान के द्वारा अग्न्याधान नामक विधि सम्पन्न कर अपनी अग्निशाला में 1. ग्राहर्पत्य 2. आह्वनीय तथा 3. दक्षिणाग्नि ऐसे तीन अग्नि स्थापन कर उन्हें अखण्ड रूप से प्रज्जवलित रखना होता है। उसमें नित्य सूर्योदय और सूर्यास्त को होम विधि सम्पन्न कर अग्नि का उपस्थापन (प्रार्थना सहित पूजन) करना होता है। इसे अग्निहोत्र विधि कहते है। यह सभी मनुष्यों के लिए आवश्यक कर्त्तव्य या अनिवार्य कर्म है। कुछ यज्ञ विशिष्ट मनोकामना की पूर्ति हेतु अथवा निजी विशेष निमित्त के कारण किये जाते है, परन्तु अग्निहोत्र, यह प्रतिदिन सूर्योदय और सूर्यास्त के समय पर करने का यज्ञ है।

आज हमारे आस-पास प्रदूषण, तनाव, अशान्ति, रोग, निसर्ग चकों का असन्तुलन जैसे अनेक भीषण प्रश्न मुँह खोले सामने खड़े है। इन समस्याओं का निराकरण करने का सामर्थ्य अग्निहोत्र में होने से 'युगधर्म' भी कहा जाता है। सृष्टि की उत्पत्ति के साथ ही परमात्मा ने सभी के कल्याण के लिये यज्ञ का कथन किया है-

सहयज्ञाः प्रजाः सृष्टवा पुरोवाच् प्रजापतिः।
अनेन प्रसविष्यध्वमेष वोऽस्त्विष्ट नामधुक् ।।

(गीता/31)
अर्थात् "यज्ञ तुम सभी को इष्ट फल देने वाली कामधेनू हो, इसके पालन से तुम सुख, समृद्धि प्राप्त कर लो। अग्निहोत्र के आचरण से पंच महाभूतों को संतुलित करो। यह सन्तुलित हुए निसर्ग चक तुम्हें भरपूर अन्नधान्य, समृद्धि तथा स्वास्थ्य प्रदान करेंगे। हम सभी परमात्मा से सदैव झोली फैलाकर कुछ न कुछ मांगते रहते है तथा निसर्ग से भी सदैव कुछ न कुछ लेते रहते हैं। अतः भगवान् तथा निसर्ग के इस ऋण से मुक्त होने का सहज आधार है- अग्निहोत्र।

नित्य स्थानीय सूर्योदय तथा सूर्यास्त के समय पिरामिड सदृश आकार के ताँम्बे या मिट्टी के पात्र में गाय के गोबर से बने कंडों से तैयार हुए अग्नि में गाय के घी से चुपड़े हुए दो-दो चुटकी चावलों (अक्षत) की समंत्रक आहुति देना ही अग्निहोत्र है।

सूर्योदय के समय यज्ञ करते हुए बोला जाने वाला मंत्र है-
सूर्याय स्वाहा, सूर्याय इदं न मम।
प्रजापतये स्वाहा, प्रजापतये इदं न मम ।।
सूर्यास्त के समय यज्ञ करते हुए बोला जाने वाला मंत्र है-
अग्नेयस्वाहा, अग्नेय इदं न मम ।
प्रजापतये स्वाहा, प्रजापतये इदं न मम ।।
अग्नि, सूर्य, प्रजापति तीनों का अर्थ एक ही है लेकिन ये शरीर, मस्तिष्क एवं प्राण (Body, Mind and Prana) को प्रभावित करते है।

अग्निहोत्र का कल्याणकारी चक्र :-
सुबह के समय किए गए अग्निहोत्र का लाभदायक एवं वातावरण की शुद्धि करने वाला परिणाम दिन भर उस स्थान पर तथा आस-पास भी कार्यरत रहता है। जैसे-जैसे सूर्यास्त का समय पास आने लगता है, वैसे-वैसे वैश्विक किरणों के उत्सर्जन में परिवर्तन होने लगता है। इस बदलते वातावरण का अपने शरीर की चयापचय प्रक्रिया पर परिणाम हो कर मनोशारीरिक स्वास्थ्य बदलने लगता है। इसी समय हम सायंकाल का अग्निहोत्र सम्पन्न कर वातावरण की बदलती हुई इस घड़ी को पुनः एक बार सुधार लेते है। मानों उसे एक सुरक्षा कवच प्रदान करते है। इस प्रकार सायंकाल किये गए, अग्निहोत्र से पुनः एक बार शुद्ध हुआ वातावरण रातभर कार्यरत रहता है। जिस घर में, जिस जगह में या खेत में हम अग्निहोत्र का आचरण करते है, वहां पर एक प्रकार का शुद्धता एवं पवित्रता का कल्याणकारी चक (Healing Cycle) कार्यरत रहता है। इसका अभिष्ट परिणाम इस वातावरण में रहने वाले कुटुम्ब के सभी सदस्यों पर, वहां के प्राणियों तथा वनस्पति पर भी होता है। अग्निहोत्र के पवित्र अग्नि को 'अग्नि गृहपति' नाम से सम्बोधित किया गया है। यह अग्नि मानो घर का प्रमुख कर्ताधर्ता व मुखिया होता है। जिस प्रकार पिता अपने पुत्र के लिए आवश्यक व हितकारक वस्तुएं प्रदान करता है उसी प्रकार निष्ठा से अग्निहोत्र करने वाले को यह अग्नि सुख-समृद्धि प्रदान करता है।

वर्तमान भाग-दौड़ की व्यस्त जीवनशैली में परिवार के सभी सदस्य एक साथ किसी समय इकट्ठे भी होते है तो भी उनके मन में अपनत्व की कड़ी कहीं कमजोर पड़ती दिखाई दे रही है। ऐसे समय में 'पवित्र अग्नि' इन सभी को सामंजस्य एवं प्रेम के सूत्र में एक साथ बांधे रखने में सक्षम है। वेदों के अनुसार जैसे रथ चक के आरे उसके मध्य-बिन्दू की ओर जाते हैं तद्धत् ही कुटुम्ब के सभी सदस्यों के मन पवित्र अग्नि की ओर आकर्षित होते है। अग्नि को वेदों में 'दिव्य होता' कहा जाता है। 'होता' अर्थात् ईश्वरीय शक्ति का आह्वान करने वाला ऋत्विज। अग्निहोत्र के स्थान पर जब हम अग्नि प्रज्जवलित कर आहुति हाथ में ले कर मन में परमपिता परमात्मा का आह्वान करते है, उस समय अग्नि ईश्वरीय शक्ति को ला कर वहां प्रत्यक्ष उपस्थित करता है-"स देवां इह वक्ष्यति" हमारा उपास्य देव हमारे सामने घर में अथवा उपास्य स्थल पर प्रत्यक्ष प्रकट होता है। अतः उस समय वहां अपार पवित्रता व मांगल्य का वातावरण निर्मित होता है।

पर्जन्यचक्र का सन्तुलनः- अग्निहोत्र की प्रक्रिया से निर्मित होने वाले धूम व अन्य सूक्ष्म तरंगे ऊंचे आकाश में जा कर वहाँ के पुष्टिकारक तत्व पर्जन्य के रूप में पृथ्वी पर खींच लेती है। इससे पर्जन्य चक्र संतुलित होने में मदद मिलती है। अग्निहोत्र से पर्यावरण की शुद्धि के साथ-साथ इसके भस्म से खेती और वनस्पति की अच्छी उपज में लाभदायक परिणाम भी देखे गए है। फलस्वरूप अधिक पुष्ट एवं अच्छी स्वादिष्ट अनाज, फल, फूल तथा साग सब्जियाँ उत्पन्न होती है।

रोगाणुओ का निरोधनः- अग्निहोत्र के औषधियुक्त वातावरण के कारण रोगाणुओं की बढ़त में रोकथाम होती है। इसके आचरण से शरीर की रोग प्रतिरोधक शक्ति बढ़ती है। तथा उत्तम स्वास्थ्य का लाभ होता है।

मनःशान्ति व मनोबल में वृद्धिः- अग्निहोत्र से प्राणशक्ति की शुद्धि होती है। सृष्टि की स्थिर चक्र व सजीव-निर्जीव सभी प्रकार की वस्तुओं में प्राण शक्ति का वास है। इन सभी घटकों में उपस्थित रहने वाली प्राण शक्ति (Cosmic Life force) यह एक समान सूत्र है। सजीव प्राणियों में प्राण शक्ति का होना उनके श्वासोच्छवास, हाल-चाल, चलना, बोलना इत्यादि क्रियाओं के माध्यम से सहज समझ में आता है। निर्जीव वस्तुओं में भी प्राण शक्ति होती है। इसका सहज अनुभव नहीं किया जा सकता परन्तु कुछ शास्त्रों के किर्लीयन तंत्र की सहायता से ऐसी वस्तुओं के छायाचित्र लेने पर उनमें एक प्रकार का उर्जावलय (Aura Energy Field) का अनुभव किया है। 'प्राण' व 'मन एक दूसरे से जुडे हुए हैं। अग्निहोत्र के कारण हुई प्राण शुद्धि का इष्ट परिणाम त्वरित गति से उस वातावरण में रहने वाले व्यक्ति के मन पर होकर बिना प्रयास तनाव दूर हो कर मन प्रसन्न व आनन्दित हो उठता है। इस वातावरण में ध्यान, मनन, चिन्तन, उपासना व अभ्यास करना सहज साध्य होता है।

अग्निहोत्र के आचरण से मनोबल बढ़ता है जो व्यसन मुक्त होने में बहुत सहायक सिद्ध होता है। नियमित रूप से अग्निहोत्र करने वाले विविध स्तरों के स्त्री-पुरूष, बालक, वृद्ध सभी का जीवन की ओर देखने का सकारात्मक दृष्टिकोण विकसित होता है। आत्म-विश्वास में वृद्धि एवं कार्य करने की क्षमता में वृद्धि जैसे अनुभव भी प्रत्यक्षतः देखे गये है। शराब तथा अन्य घातक मादक द्रव्यों में व्यसनाधीन व्यक्ति अग्निहोत्रीय वातावरण के तुष्टिकारक प्रभाव के कारण उन व्यसनों से मुक्त हो सकते है क्योंकि इससे दुर्दम्य इच्छाशक्ति का विकास होता है। इतना ही नही अग्निहोत्रीय वातावरण में छोटे बच्चे शान्त रहते है व उनकी प्राणशक्ति में वृद्धि हो कर वे अधिक एकाग्रचित हो जाते है। चिडचिडे, हठी तथा मतिमंद बालकों में भी इस वातावरण का इष्ट परिणाम अनुभव किया गया है।

अस्तु ! अग्निहोत्र का नियमित अभ्यास आज मानव जीवन के लिए उतना ही आवश्यक है जितनी की मूलभूत आवश्यकताएँ प्राण-वायु जिससे हम सांस लेते है, जल जो हम पीते है और भोजन जो हम खाते है। चारों ओर बढ़ते हुए प्रदूषण, चाहे वह वायु प्रदूषण हो या जल प्रदूषण अथवा भूमि प्रदूषण सम्पूर्ण विश्व में खतरे की घंटी सुनायी दे रही है। फलस्वरूप मानव-मस्तिष्क पर तनाव व चिंताओं का बोझ बढता जा रहा है। दुष्परिणाम से बचने के लिए निश्चय ही कोई आवश्यक व ठोस उपाय जरूरी है और वह है अग्निहोत्र। पर्यावरण शुद्धि में इसका कोई विवरण नहीं हो सकता।

REFRENCES

[1]. Rig Veda — *Hymns Translated by Ralph T.H. Griffith*. London: E.J. Lazarus & Co., 1896.
[2]. Yajur Veda — *English Translation by Devi Chand*. New Delhi: Munshiram Manoharlal, 1959.
[3]. Atharva Veda — *English Translation by Maurice Bloomfield*. Oxford: Clarendon Press, 1897.
[4]. Apastamba Grihya Sutras — *English Translation by Hermann Oldenberg*. Sacred Books of the East, Vol. 30. Oxford: Oxford University Press, 1882.
[5]. Shatapatha Brahmana — *Translated by Julius Eggeling*. Sacred Books of the East, Vol. 12–26. Oxford: Oxford University Press, 1882–1900.
[6]. Manu Smriti — *Translated by G. Bühler*. Sacred Books of the East, Vol. 25. Oxford: Oxford University Press, 1886.